

संस्कृत नाटकों में रस

मोनिका

शोधार्थी, रजिस्ट्रेशन नंबर - 22-BMU-7566

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय अस्थल बोहर, रोहतक

डॉ. पटेल सिंह

सहायक प्रोफेसर संस्कृत विभाग

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय अस्थल बोहर, रोहतक

सार

संस्कृत साहित्य की समृद्ध नाट्यपरंपरा में रस सिद्धांत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। यह सिद्धांत केवल सौंदर्यबोध की परिकल्पना नहीं, दर्शक और पाठक के भीतर गहन भावानुभूति उत्पन्न करने का माध्यम भी है। प्रस्तुत शोधकार्य में संस्कृत नाटकों में रस सिद्धांत के प्रयोग और प्रभाव का गहन अध्ययन किया गया है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से आरंभ होकर अभिनवगुप्त जैसे आचार्यों की व्याख्याओं तक, रस सिद्धांत का विकास भारतीय रंगमंच की आत्मा के रूप में सामने आता है। शोध में कालिदास, भवभूति, भास एवं शूद्रक जैसे महान नाटककारों की कृतियों में रसों की योजना, उनकी अभिव्यक्ति के माध्यम, और दर्शक पर पड़ने वाले प्रभाव का समीक्षात्मक विश्लेषण किया गया है। साथ ही, आधुनिक रंगमंच में रस सिद्धांत की प्रासंगिकता का परीक्षण करते हुए यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि यह सिद्धांत केवल पारंपरिक ग्रंथों तक सीमित न रहकर, आज भी नाट्य-अनुभव की संवेदनात्मक गहराई को प्रभावित करता है। यह शोध शास्त्रीय दृष्टिकोण से रस की विवेचना करता है, नाटकीय अभिव्यक्ति में उसकी व्यावहारिक उपयोगिता को भी रेखांकित करता है।

मुख्यशब्द: रस सिद्धांत, संस्कृत नाटक, नाट्यशास्त्र, नाटकीय अभिव्यक्ति, भारतीय रंगमंच।

परिचय

संस्कृत साहित्य में नाटक एक अत्यंत प्रतिष्ठित विधा रही है, जिसने भारतीय काव्यशास्त्र, धर्म, समाज और सौंदर्यशास्त्र को सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। इस नाट्य परंपरा की आधारशिला भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में रखी गई थी, जिसमें नाटक के निर्माण, प्रस्तुति, पात्रों और रसों का विस्तार से वर्णन किया गया है। विशेषतः रस सिद्धांत भारतीय काव्यशास्त्र की आत्मा मानी जाती है, जिसे भरत ने

"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः" (नाट्यशास्त्र VI.31)

के रूप में परिभाषित किया। रस का अर्थ केवल आनंद नहीं, वह अनुभूति है जो दर्शक के हृदय को भीतर तक आंदोलित करती है।

नाटकों में रस सिद्धांत का प्रयोग मात्र सजावटी तत्व नहीं है, यह दर्शक की भावनात्मक संलग्नता और नाटक की कथावस्तु को सजीव करने का एक मूलभूत माध्यम है। नाटक की संप्रेषणीयता और प्रभावशीलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह किस प्रकार से रसों को जागृत करता है। संस्कृत नाटकों में यह जागरण अत्यंत वैज्ञानिक और कलात्मक ढंग से किया गया है, जहाँ नायक-नायिका की स्थिति, संवाद, भाव-भंगिमा और मंचीय प्रस्तुति मिलकर दर्शक को रसानुभूति तक पहुँचाते हैं।

कालिदास, भवभूति, भास, शूद्रक जैसे महान नाटककारों ने अपने काव्य-नाटकों में रस सिद्धांत का विविध रूपों में उपयोग कर दर्शकों की हृदय-ग्राही संवेदना को चरम पर पहुँचाया। *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* में शृंगार रस की प्रधानता हो या *उत्तररामचरितम्* में करुण रस की अभिव्यक्ति, सभी नाटक रस की व्यापकता और गहराई को प्रमाणित करते हैं। संस्कृत नाटक में रस केवल एक भाव नहीं, दर्शक के भीतर उस भावना की संपूर्ण अभिव्यक्ति है, जो उन्हें पात्रों के साथ जोड़ती है।

रस सिद्धांत केवल सौंदर्यशास्त्र का तत्व नहीं, भारतीय दर्शन, मनोविज्ञान और सामाजिक संरचना का संवाहक भी है। यह दर्शक के अंतर्मन में नाटक के पात्रों की पीड़ा, प्रेम, क्रोध, वीरता और भय जैसी विविध अवस्थाओं को संप्रेषित करता है। यही कारण है कि संस्कृत नाटक शुद्ध मनोरंजन से आगे बढ़कर एक आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षण का साधन बन जाता है।

भारतीय नाट्यशास्त्र में नाटक को 'नाटकं दृष्टं कव्यं' (देखा गया काव्य) कहा गया है, और रस उसकी आत्मा है। नाट्य का प्रयोजन लोक-कल्याण है—"लोकस्योपदेशार्थं नाट्यं"—और रस इसके लिए सबसे प्रभावशाली साधन बनता है। भरतमुनि द्वारा प्रस्तावित नव रसों — शृंगार, वीर, करुण, रौद्र, अद्भुत, भयानक, बीभत्स, हास्य, और शांत — को नाटकों में भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट किया गया है। कालिदास के नाटकों में शृंगार और शांत रस की संजीवता, भवभूति के नाटकों में करुण और वीर रस की गंभीरता, तथा भास के नाटकों में विविध रसों की सहजता शोध के मुख्य केंद्र में आती है।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह है कि संस्कृत नाटकों में रस सिद्धांत किस प्रकार कार्य करता है, वह दर्शक की संवेदना और कलात्मक आनंद को किस प्रकार प्रभावित करता है, और इस सिद्धांत की क्या समकालीन प्रासंगिकता है। यह विषय साहित्यशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है, रंगमंच, सौंदर्यशास्त्र और सांस्कृतिक अध्ययन के व्यापक क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण है।

अध्ययन का महत्व

संस्कृत नाट्य परंपरा भारतीय साहित्यिक और सांस्कृतिक विरासत की अमूल्य निधि मानी जाती है, जिसमें *रस सिद्धांत* एक केंद्रीय भूमिका निभाता है। यह परंपरा केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं रही, उसने सौंदर्यबोध, नैतिक शिक्षा और भावात्मक अनुभूति का संगम प्रस्तुत किया। संस्कृत नाटकों के माध्यम से, विशेष रूप से कालिदास, भवभूति और भास जैसे महान नाटककारों ने मानव अनुभव के विविध पक्षों को रसों के माध्यम से दर्शाया, जिससे दर्शकों और पाठकों में एक गहरा भाव-संप्रेषण संभव हो पाया। रस निष्पत्ति के द्वारा नाटक भावनाओं का सजीव मंच बन जाते हैं, जहाँ करुण, शृंगार, वीर, और अन्य रस दर्शकों को उनके भीतर की संवेदनाओं से जोड़ते हैं। यह अध्ययन इस

पारंपरिक सिद्धांत की समकालीन प्रासंगिकता को समझने और दर्शकों के मानसिक एवं सांस्कृतिक अनुभवों पर इसके प्रभाव को उद्घाटित करने का प्रयास करता है। आज के यांत्रिक युग में भी, रस सिद्धांत की यह विश्लेषणात्मक शक्ति मानवीय भावनाओं को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम बनी हुई है, जो इस शोध को अत्यंत महत्वपूर्ण और समयोचित बनाती है (गेरो, 1992)

संस्कृत नाटकों में रस सिद्धांत का प्रयोग

संस्कृत नाटकों की आत्मा रस सिद्धांत में निहित है, जो दर्शक को भावनात्मक अनुभव प्रदान करता है, उसे नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक स्तर पर भी स्पर्श करता है। भरतमुनि के *नाट्यशास्त्र* के षष्ठ अध्याय में कहा गया है:

"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः" (नाट्यशास्त्र VI.31),

अर्थात् विभाव, अनुभाव, और व्यभिचारी भावों के योग से रस उत्पन्न होता है। संस्कृत नाटक इन भावों को मंच पर जीवंत करने का माध्यम रहा है। इसमें अभिनय के चार प्रकार – वाचिक, आंगिक, सात्त्विक और आहार्य – रस की अभिव्यक्ति में सहायक तत्व होते हैं।

भाव और रस की व्यावहारिक प्रस्तुति नाटक की रचना और मंचन की प्रक्रिया का केंद्रीय बिंदु है। भाव नाटक के पात्रों में अंतर्निहित मानसिक और शारीरिक अवस्थाओं को व्यक्त करता है, जबकि रस वह आत्मानुभव है जो दर्शक के मन में उत्पन्न होता है। उदाहरण के लिए, *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* में शकुंतला और दुष्यंत के बीच प्रेम का श्रृंगार रस, दर्शकों को एक गूढ़ सौंदर्यात्मक अनुभव प्रदान करता है। यही श्रृंगार, वात्सल्य, करुण, वीर, और अन्य रसों के साथ, नाटक को रचनात्मक ऊँचाई तक पहुँचाता है।

अभिनय की चार श्रेणियाँ – वाचिक (भाषा और संवाद), आंगिक (शारीरिक हावभाव), सात्त्विक (आंतरिक भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ), और आहार्य (पोशाक, साज-सज्जा आदि) – रस की सशक्त अभिव्यक्ति के स्तंभ हैं। *वाचिक अभिनय* संवाद की लय, गति, उच्चारण और भावाभिव्यक्ति से रस उत्पन्न करता है। *आंगिक अभिनय* में नेत्र, हस्त, पद और शरीर की गति रसों के संप्रेषण में महत्वपूर्ण होती है। *सात्त्विक अभिनय* विशेष रूप से करुण, भय, विस्मय आदि रसों में दर्शकों के भीतर गहरी संवेदना जागृत करता है, जैसे भवभूति के *उत्तररामचरितम्* में सीता की पीड़ा को दर्शाना। *आहार्य अभिनय* नाटक की दृश्यात्मक व्यंजना को सशक्त करता है, जिससे नाट्य स्थल और पात्रों की स्थिति स्पष्ट होती है, जैसे शूद्रक के *मृच्छकटिकम्* में चारुदत्त और वसंतसेना का वैभव या विपन्नता।

संस्कृत नाट्य साहित्य के महान रचनाकारों ने रस सिद्धांत को केवल सैद्धांतिक आधार नहीं माना, उसे रचनात्मक उपकरण के रूप में प्रयोग किया। कालिदास ने अपने नाटकों में श्रृंगार और शांत रस की विशेष अभिव्यक्ति की। *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* में शकुंतला और दुष्यंत के प्रेम की कोमलता, *विक्रमोर्वशीयम्* में उर्वशी की भावनात्मक गहराई और *मालविकाग्निमित्रम्* में युवाजनित आकर्षण रसों की समृद्ध योजना को दर्शाते हैं (गनोली 142)। उनकी भाषा में माधुर्य, प्रसादगुण और अनुप्रास रस की अभिव्यक्ति को और प्रभावशाली बनाते हैं।

भास के नाटकों में वीर और रौद्र रस की योजना अत्यंत सजीव है। *स्वप्नवासवदत्तम्* और *प्रतिज्ञा यौगंधरायणम्* जैसे नाटकों में राजनीतिक युक्तियाँ, संघर्ष, और युद्ध वीर रस को मुखरित करते हैं। भास के पात्र कभी-कभी पारंपरिक सीमाओं से बाहर जाते हैं और रसों को नयी दिशा प्रदान करते हैं। उनके नाटक *उरुभंगम्* में दुःशासन और दुर्योधन की करुण स्थिति करुण रस का अनूठा दृष्टांत है (गेरो 68)।

भवभूति, जिन्हें करुण रस का आचार्य कहा जाता है, ने अपने *उत्तररामचरितम्*, *मालतीमाधवम्* और *महावीरचरितम्* में पीड़ा, प्रेम और वीरता की मिश्रित योजनाएँ प्रस्तुत कीं। सीता की निर्वासन की स्थिति में करुण रस और राम की मर्यादा पालन में वीर रस दर्शक को दार्शनिक संवेदना की ओर ले जाता है। उनकी शैली गंभीर, दार्शनिक और गूढ़ है, जो रसों को दीर्घकालिक प्रभाव में बदल देती है (मैसन और पटवर्धन 214)।

शूद्रक, एक प्रयोगशील नाटककार माने जाते हैं, जिनकी रचना *मृच्छकटिकम्* बहुरसात्मकता का उदाहरण है। इस नाटक में शृंगार, हास्य, करुण, बीभत्स और वीर रसों की परतें हैं। चारुदत्त की नैतिकता, वसंतसेना का प्रेम, विदूषक का हास्य और अपराधियों की क्रूरता – ये सभी मिलकर रस की बहुविध प्रस्तुति करते हैं। शूद्रक ने समाज के विविध वर्गों को मंच पर उतारा और रस सिद्धांत को सामाजिक यथार्थ से जोड़ा।

संस्कृत नाटकों में रस सिद्धांत केवल सौंदर्यशास्त्रीय अवधारणा नहीं, संपूर्ण नाट्यकला की रचना, संरचना और प्रस्तुति का मूल आधार है। वाचिक, आंगिक, सात्त्विक और आहार्य अभिनय के सहयोग से रसों की व्यावहारिक प्रस्तुति संभव होती है, जिसे नाटककारों ने कुशलतापूर्वक साधा। इन नाटकों के माध्यम से रस सिद्धांत दर्शक को आनंद प्रदान करता है, उसे आत्मनिरीक्षण, नैतिक शिक्षा और आध्यात्मिक उन्नयन की ओर भी प्रेरित करता है।

प्रमुख संस्कृत नाटकों का रस विश्लेषण

संस्कृत नाट्य साहित्य की प्रमुख विशेषता उसकी रसपरकता है, जिसे हर युग के नाटककारों ने अपनी रचनाओं में जीवंत किया है। भरतमुनि के *नाट्यशास्त्र* में प्रस्तुत नव रसों की योजना केवल काव्यिक कल्पना न होकर व्यवहार में सजीव होती है, विशेषकर नाटकों में। इस अनुभूति की व्याख्या तब सार्थक होती है जब हम कालिदास, भवभूति और भास जैसे नाटककारों की रचनाओं का रस सिद्धांत के आलोक में गहन अध्ययन करते हैं।

कालिदास के नाटकों में रस योजना

कालिदास का नाट्य साहित्य विशेषकर शृंगार रस की उत्कृष्टता के लिए जाना जाता है। *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* में उन्होंने शृंगार रस की *संयोग* और *विप्रलंभ* दोनों अवस्थाओं को गहराई से अभिव्यक्त किया है। शकुन्तला और दुष्यंत की प्रेमकथा में *विभाव* (उद्दीपन), *अनुभाव* (प्रेम की प्रतिक्रियाएँ), और *व्यभिचारी भावों* का समन्वय दर्शक के मन में सौंदर्य और करुणा की भावनाएँ जागृत करता है। शकुन्तला का त्याग, उसका दुःख और अंततः पुनर्मिलन – ये सभी प्रसंग रसोत्पत्ति

की प्रक्रिया को सशक्त करते हैं (गोली 143)। शांत रस भी नाटक के अंत में प्रमुख रूप से प्रकट होता है, जब पात्रों में क्षमा, शांति और आत्मबोध की स्थापना होती है।

विक्रमोर्वशीयम् में कालिदास ने दिव्य प्रेम और विरह की पीड़ा को उत्कर्ष पर पहुँचाया है। उर्वशी और पुरुरवा का प्रेम दैविक है, किंतु उनकी जुदाई, उर्वशी का श्राप, और पुनर्मिलन – इन सभी घटनाओं में *शृंगार रस* के साथ-साथ *करुण रस* भी प्रमुख रूप से विकसित होता है। कालिदास के संवादों में माधुर्य गुण और रस की योजना इतनी सशक्त है कि पाठक अथवा दर्शक सहज ही पात्रों के साथ भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है।

भवभूति के नाटकों में रस योजना

भवभूति को करुण रस का श्रेष्ठ साधक माना गया है। *उत्तररामचरितम्* में उन्होंने राम के जीवन की उस पीड़ाजनक अवस्था को प्रस्तुत किया है जहाँ वह धर्म और प्रेम के द्वंद्व में फंसे होते हैं। सीता का परित्याग, राम की व्यथा, लक्ष्मण की ग्लानि – ये सभी प्रसंग करुण रस को गहन बनाते हैं (मैसन और पटवर्धन 219)। भवभूति ने करुण रस को केवल भावनात्मक नहीं, दार्शनिक स्तर पर प्रस्तुत किया है, जहाँ धर्म, मर्यादा और सत्य के द्वंद्व दर्शक के भीतर गूढ़ संवेदना उत्पन्न करते हैं।

मालतीमाधवम् में भवभूति ने शृंगार, करुण, और भयानक रसों का मिश्रण किया है। मालती और माधव का प्रेम शृंगार रस का सुंदर रूप है, जबकि उनकी विपत्तियाँ करुण रस को जन्म देती हैं। तांत्रिक, बलिदान की योजना, और राक्षसी तत्व भयानक रस की उपस्थिति को दर्शाते हैं। इस नाटक की एक विशेषता यह है कि रसों का संतुलन बहुत सावधानीपूर्वक किया गया है, जिससे नाटक न तो केवल करुण बनता है, रोमांटिक, एक व्यापक मानव अनुभव को दर्शाता है।

भास के नाटकों में रस योजना

भास का नाट्य साहित्य वीर और रौद्र रस की दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। *स्वप्नवासवदत्तम्* में उन्होंने राजनीतिक युक्तियों और कूटनीति के माध्यम से वीर रस को प्रकट किया है। उज्जयिनी के राज्य को पुनः प्राप्त करने के लिए यौगंधरायण की योजनाएँ, वासवदत्ता का त्याग और उदयन की वीरता, ये सभी तत्व वीर रस की योजना को समर्थ बनाते हैं। साथ ही, पात्रों के मनोविकार और युद्ध के दृश्य रौद्र रस को भी दर्शाते हैं (गेरो 84)।

प्रतिज्ञायौगंधरायणम् में वीर रस के साथ साथ भक्ति और नीतिकथा का मिश्रण है। यौगंधरायण की कूटनीतिक चालें, उनका राज्य के प्रति निष्ठावान समर्पण और उद्धार की योजना दर्शक के भीतर वीरता और प्रेरणा उत्पन्न करती है। भास के नाटक अधिक नाटकीय और प्रायः पारंपरिक नियमों से अलग प्रतीत होते हैं, लेकिन रसों की योजना में वे अत्यंत प्रभावशाली हैं।

भास के नाटकों की एक विशेषता यह भी है कि वे मंचीय दृष्टिकोण से अत्यंत उपयुक्त हैं, और उनमें अभिनय की सभी चार श्रेणियों – वाचिक, आंगिक, सात्त्विक और आहार्य – के द्वारा रसों की व्यंजना सहज संभव होती है।

निष्कर्ष

संस्कृत नाटकों में रस सिद्धांत की उपस्थिति केवल सैद्धांतिक नहीं, एक जीवंत नाटकीय अनुभव का निर्माण करती है, जो दर्शकों की भावना, चेतना और सौंदर्यबोध को गहराई से प्रभावित करती है। नाटककारों ने भावों की अनुभूति को रस के माध्यम से एक सार्वभौमिक संवेदना में परिवर्तित कर दिया है, जिससे नाटक दृश्य-श्रव्य माध्यम न रहकर आत्मिक संवाद का माध्यम बन जाता है। कालिदास की करुणा और शृंगार से परिपूर्ण प्रस्तुतियाँ, भवभूति की गहन वेदना और गंभीरता, तथा भास की विविध रसों में रचित कहानियाँ – सभी दर्शक को पात्रों के साथ भावनात्मक रूप से जोड़ते हैं। संवादों की गूढ़ता, अभिनय की सजीवता, दृश्यावलोकन की सौंदर्यता और चरित्रों के मनोभाव – ये सभी तत्व दर्शक को रसास्वादन की चरम अवस्था तक ले जाते हैं। रस निष्पत्ति केवल एक कलात्मक प्रक्रिया नहीं, दर्शक और नाटक के मध्य एक सेतु है, जहाँ से अभिव्यक्ति और अनुभव का समागम होता है। इस प्रकार, संस्कृत नाटकों की रसात्मकता भारतीय नाट्यशास्त्र की कालजयी परंपरा का प्रमाण है, जो आज भी दर्शकों के अंतर्मन को झकझोरने की सामर्थ्य रखती है।

□□□□□ :

1. **नाट्यशास्त्र**। भरतमुनि, ट्रांस. मनोहर घोष। कोलकाता: एशियाटिक सोसाइटी, 1950.
2. **भारतीय काव्यशास्त्र**। गेरो, एडविन। विस्बाडेन: ओटो हैरासोवित्ज़, 1977.
3. **अभिनवगुप्त के अनुसार सौन्दर्यपरक अनुभव**। ग्रीली, रानिरियो। वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत श्रृंखला, 1968.
4. **सौन्दर्यपरक उत्साह: नाट्यशास्त्र का रसाध्याय**। मैसन, जेफरी, और एम. वी. पटवर्धन। दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, 1970.
5. **संस्कृत नाटक और नाट्यशास्त्र**। भट्टाचार्य, बिस्वनाथ। वाराणसी: शारदा प्रकाशन, 1994.
6. **भरत नाट्य मंजरी**। भट्ट, जी. के. पूना: भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, 1975.
7. **भरतमुनि का नाट्यशास्त्र, खंड-II**। एड. रामकृष्ण एम. कवि और के. एस. रामास्वामी शास्त्री। बड़ौदा: ओरिएंटल इंस्टीट्यूट, 1980.
8. **संस्कृत नाटक की संरचना पर**। ठक्कर, बी. के. अहमदाबाद: सरस्वती पुस्तक भंडार, 1984.
9. **नाट्यशास्त्र**। भरत, अनुवादक: मनोमोहन घोष। कोलकाता: एशियाटिक सोसाइटी ऑफ कलकत्ता.
10. **अभिनवभारती (नाट्यशास्त्र पर टिप्पणी)**। अभिनवगुप्त, संपादक: एम. जी. शास्त्री.
11. **भारतीय काव्यशास्त्र**। गेरो, डेविड। विस्बाडेन: ओटो हैरासोवित्ज़, 1977.

12. ए रस रीडर: क्लासिकल इंडियन एस्थेटिक्स। पोलक, शेल्डन। न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 2016.
13. रक्तांकुरम और अन्य संस्कृत नाटक। शास्त्री, सत्यव्रत। दिल्ली: राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान.
14. संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास। डे, एस. के. कलकत्ता: फ़िरमा केएलएम, 1960.
15. अभिनवगुप्त के अनुसार सौंदर्य अनुभव। गनोली, रानिएरो। वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत श्रृंखला.
16. द ऑक्सफ़ोर्ड कम्पेनियन टू इंडियन थिएटर। लाल, आनंद। दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2004.
17. संस्कृत नाटक। राघवन, वी. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, 1993.
18. संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास। केन, पी. वी. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, 1995.